# सारथी जरूरतमंद कलाकारों के मददगार

दोस्तों,

18 साल पहले (14 अगस्त 1988) को स्व. कमला देवी चटोपाध्याय जी ने हमारे बुनकरों द्वारा बनाया गया तिरंगा हुनरमंद कलाकारों की नई पीढ़ी को सौंपा था। उस दिन से आज तक हम सब बुनकर, दस्तकार, संगीतकार और लोक कलाकारों के साथ मिलकर हर वर्ष एक खास विषय लेकर स्वतंत्रता दिवस मनाते आ रहें है।

इस वर्ष का विषय है.....

सांस्कृतिक उद्योग में सृजनात्मक अभियान

सांस्कृतिक उद्योग? इन दो शब्दों का जोड़ मैंने पहली बार 7 साल पहले विश्व बैंक के अध्यक्ष जेम्स वोल्फेन्सन से सुना। उन्होंने मेरे साथ एक कमेटी का गठन किया। विश्व बैंक की अर्थनीति में कला, शिल्प और सजन से जुड़ी विधाओं का समावेश और उनके उचित विकास के साथ–साथ गरीबी कम करने के सन्दर्भ में यह एक सुखद बदलाव था। क्योंकि विश्व बैंक के अर्थशास्त्री घरेलू उद्योग और स्वयं प्रबंधित उद्योगों को इतना महत्व नहीं देते।

संस्कृति और उद्योग का यह जोड़ एक नज़र में भले ही बेमेल दिखाई पड़ता हो लेकिन आज के समय में लगातार बदलती हुई अर्थव्यवस्था में हमें संस्कृति को नई आँख से देखने की ज़रुरत है। इसलिए अब हमें अपने पारम्परिक ज्ञानाधारित सांस्कृतिक धरोहर और उनसे जुड़े प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष कलात्मक एवं सृजनशील उत्पादन को आगे बढ़ाना चाहिए जिसमें आय बढ़ाने की क्षमता के साथ–साथ अपने परिवेश से जुड़ाव भी बना रहे। सृजनात्मक और सांस्कृतिक उद्योग के दायरे में वे सभी लोग आते हैं जिनका विरासत से जुड़ा स्वयं का कारोबार हो जैसे पाक कलाऐं दस्तकारी, नाटक, शास्त्रीय, लोक व आधुनिक कलाऐं इत्यादि।

आर्थिक रूप से भले ही भारत गरीब देशों की गिनती में आता है लेकिन ज्ञान और सांस्कृतिक सम्पदा के मामले में हम सबसे आगे हैं और आज की वैश्विक अर्थव्यवस्था में जहाँ 'कोपी राईट' व 'पेटेन्ट' का बोलबाला है अगर हम अपनी इस अप्रत्यक्ष सम्पदा का उपयोग नहीं करेंगे तो बहुत कुछ खो सकते हैं। आधुनिकता और औद्योगिकरण के इस दौर में हम अपनी विरासत को 'इन्टेलेकच्युल प्रापर्टी राइट्स' (Intellectual Property Rights) का जामा पहनाकर ही सुरक्षित रख पायेंगे।

आज ज्ञानात्मक अर्थशास्त्र की वजह से सृजनात्मक और सांस्कृतिक उद्योग दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ने वाला क्षेत्र है और बहुत सारे देशों ने इसके लिए अलग विभाग भी बना लिए हैं जिसके द्वारा बिखरे हुए व छोटे उद्योगों की पूरी क्षमता का इस्तेमाल किया जा सके। आज के मशीनी युग में लगभग सभी देश मानते हैं कि सृजनात्मक और सांस्कृतिक उद्योग उनकी आय और रोज़गार का प्राथमिक ज़रिया हो सकते हैं। सृजन और संस्कृति को उद्योग का दर्जा मिलने से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत सारे फायदे होंगे जो कलाकारों और हुनरमंदों का संरक्षण करने में मदद करेंगे।

आज हिन्दुस्तान में कोई एक ऐसा आयोग नहीं है जो सृजन और सांस्कृतिक उद्योग से जुड़े मंत्रालयों को जोड़ कर विश्व में उनका प्रतिनिधित्व करता हो। अगर हर चीज़ के लिए मुकम्मल जगह हो तो हर चीज़ अपनी मुकम्मल जगह पर मिलती है। सरकार का काम समाज सेवा, धर्म या दान नहीं है, बल्कि हर व्यक्ति व उद्योग विशेष का समाज में अपना निश्चित स्थान बनाने में सहायता करने का है।

नींद से जागते हुए भारत सरकार ने पहली बार 'सांस्कृतिक उद्योग' का उप–आयोग बना कर एक नई पहल की है। 10वें योजना आयोग ने उपरोक्त बातों को माना और उनसे प्रभावित होकर सांस्कृतिक विशेष उप–आयोग के गठन का मुझे आदेश दिया। जिससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय सरकार और अफसरशाही ने न सिर्फ ये माना कि इस व्यवसायिक खण्ड में एक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय उद्योग बनने की क्षमता है बल्कि इस मान्यता की वजह से वह इस उद्योग को बढ़ाने के लिये प्रतिबद्ध भी हो गये हैं। इससे सरकार का यह नज़रिया साफ होता है कि कला और कलाकार को उद्योग के रूप में भी देखा जाये ताकि उनकी उन्नति और उनके व्यवसाय की उन्नति की तरफ ठोस कदम उठाये जायें।

अपनी इस बिसरती धरोहर को नई तकनीक से जोड़ कर अलग भारतीय उत्पाद व सेवायें बनाकर हम विश्व बाज़ार में अपना सिक्का जमा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर हमारे पास दुनिया भर से ज्यादा परम्परागत चित्रकलायें, मधुबनी, वरली, सौरा, पिथोरा, गोंड, बंगाल एवम् सांथाल पटवा, पटचित्र, मिनियेचर कलमकारी, पछेड़ी पड़ वगैरह हैं और इन चित्रकलाओं और मूर्तीकलाओं का अगुवा एनिमेशन हो सकता है । एनिमेशन के विश्व बाज़ार में भारत का बहुत बड़ा हिस्सा हो सकता है। एनिमेशन क्षेत्र के 70 बिलियन के व्यापार में भारत का हिस्सा एक बिलियन अमेरिकी डालर है और सन 2009–10 तक इसके 15 बिलियन अमेरिकी डालर तक बढ़ने की उम्मीद है। क्या यह सिर्फ बाहर की कम्पनियों की आउटसोर्सिंग से ही हो होगा या हिन्दुस्तान को अपनी खुद की वास्तविक पहचान बना कर आगे जाना होगा। इसी तरह 250 बिलियन अमेरिकी डालर के उपहार के सामान में भारत के हैण्डीक्राफ्ट बाजार का हिस्सा लगातार 20 प्रतिशत हर साल बढ़ रहा है।

पर हमारी सरकार के कुछ अर्थशास्त्रीयों के लिए इन छोटे व्यापार से बने बड़े आंकड़ों से जैसे कोई मतलब ही नहीं। उदाहरण के लिए भारत में पूरे हैण्डलूम उद्योग का बजट सिर्फ 160 करोड़ है और हालत इस कदर ख़राब है कि इस क्षेत्र से जुड़े लगभग 20 लाख लोग बेरोज़गार होने की कगार पर हैं और न जाने कितने ही अब तक बेरोज़गार हो चुके होंगे। विडम्बना देखिए की सरकार की रोज़गार गारन्टी योजना (स्कीम) में एक परिवार पर 10,000 रूपये की लागत आती है और अगर यह सभी 20 लाख लोग बेरोज़गार हो जाते हैं तो इन्हें इस योजना (स्कीम) का फायदा दिलाने में ही 800 करोड़ रूपये की लागत आ जाएगी। और इसमें भी जो काम वे लोग करेंगे उसका उनके हुनर से दूर–दूर तक कोई वास्ता नहीं होगा। ऐसा काम न तो उन कलाकारों को सुखी कर पाएगा और न ज्यादा टिकाऊ बना रहेगा।

अब भी अगर हम इन लोगों की दौलत को नहीं पहचानेंगे तो हमारा देश और भी ग़रीब हो जायेगा। वास्तविकता में ग़रीब लोगों का हुनर ही उनकी शक्ति है, उनकी दौलत है। 'हुनरमंद का एक दिन, बेहुनर का एक साल'। बात तो सही है जो बचपन से अपने माँ–बाप से परम्परागत कार्य को सीखता आ रहा है उसकी निपुणता को अनदेखा कर आज वे लोग उनको ट्रैनिंग देते हैं जो उनके सामने कुछ भी नहीं जानते। सातवें दशक के आख़िर में जनता क्लोथ स्कीम लागू हुई थी जिसमें हल्के घटिया कपड़े के उत्पादन में छूट दी गई तो बहुत सारे बुनकर इस कपड़े को बनाने में जुट गये और इस तरह से अपनी पूरी निपुणता का इस्तेमाल नहीं कर सके। इस चक्कर में हमने काम की गुणवत्ता को बढ़ाने के बजाये ग़रीब बुनकरों के पूरे समाज को ही बेकार बैठा दिया। यदि आज गांधी जी ज़िन्दा होते तो शायद खादी अपनी अनोखी पहचान के साथ विश्व भर में लोकप्रिय होती।

आज़ादी के बाद परम्परा से जुड़ी सारी चीज़ों को खादी के नाम पर एक ही टोकरी में रद्दी की तरह भर दिया गया था। 80 के दशक में फेस्टीवल ऑफ इण्डिया होने के बाद अन्तर्राष्ट्रीय दर्शकों को हमारी रचनाओं और सभ्यता का पता चला जिसने हमें एक पुख़्ता पहचान और अस्तित्व तो प्रदान किया लेकिन इसका लाभ हम कलाकारों की चौखट तक पूरी तरह से नहीं पहुँचा पाये। हुनरमंद कलाकारों ने अब तक विपरीत परिस्थितियों में भी खुद को बचाये रखा है।

आज हम संस्कृति के नाम पर लोक कलाओं से जुड़े किसी भी शहरी कलाकार को तो सिर आँखों पर बिठा लेते हैं जो असल में कई बार गाँव की असली कला की एक नकल भर होता है। इसी तरह बड़े–बड़े डिज़ाईनरों के नाम से चिकन–वर्क एक लाख रूपये में बिकता है जबकि दर्जनों औरतें वैसा ही काम सिर्फ 2000 रुपये में बेच देती हैं।

कला और संस्कृति की अपनी अलग पहचान को कायम रखने के सन्दर्भ में तकरीबन 30 साल पहले मैंने आदरणीय श्रीमती कमलादेवी चटोपाध्याय जी से पूछा था कि क्यों न दस्तकारी (हैन्डीक्राफ्ट) और हैन्डलूम् का एक अलग ही मन्त्रालय बनाया जाये क्योंकि एक तरह से अब इनका नियमित व्यापार बहुत ही कम है और वर्तमान में इनकी पूरी क्षमता का सही उपयोग भी नही हो पा रहा है। कमला जी का जवाब मेरे लिए एक सबक़ था "कला के लिए वाणिज्य वैसा ही है जैसा कि फेफड़ों के लिए ऑक्सीज़न लेकिन अगर दिल और दिमाग की शक्ति कम है तो कला के अस्तित्व को स्थापित करने के अवसर बहुत ही कमज़ोर हो जाते हैं"।

अपनी इसी भूली बिखरी पहचान को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित करने के लिए हमें विशेष समूह बनाने होंगे जो हमारी ज्ञानात्मक सम्पत्ति को सुरक्षित रखने के लिए बैंक व ऋण (उधार) में सहायता और आसानी से पैसा उपलब्ध कराने के मार्ग को आसान और कलाकारों की पहुँच तक बना सकें। बुनियादी तौर पर ज्ञान पद्धति और हुनर की सहायता और पुनःस्थापना से ही हमारा भविष्य उज्जवल हो सकता है।

पहचान की इसी उधेड़बुन में कुछ कलाओं को तो भौगोलिक रूप से जाना जाता रहा है जैसे कोल्हापुरी जूतियाँ, बनारसी साड़ी वग़ैरह। लेकिन उतनी ही अद्भुत, कलात्मक और गाँव–गाँव में बिखरी हुई दूसरी ऐसी ही रचनाओं का क्या, उनको तो कोई नहीं जानता। इसलिए आज ज़रूरत है इनकी एक अलग पहचान बनाने की जैसे फ्रांस ने शेमपेन, वाइन, पनीर, इत्र इत्यादि की बनाई है। अपने हर एक पारम्परिक उत्पाद के लिए उन्होंने अलग–अलग भौगोलिक संकेतक (Geographical indicators) विकसित किए हैं ताकि प्रत्येक उत्पाद की एक अलग पहचान कायम रह सके। इसी तरह हमें भी अपनी अलग अलग पंचायतों के लिए ऐसे ही भौगोलिक संकेतक विकसित करने होंगे।

पर हमारे लिए अब सबसे मुश्किल बात है कि इन सब की एक पहचान बने तो बने कैसे, लोगों को जागरूक करें कैसे। आधुनिकता की इस दौड़ में सरकार, समाज, सभी ने व्यवस्था के अधीन होकर अपनी इन देसी रचनाओं को महत्व न दे कर इन्हें आगे बढाने में सुस्ती दिखाई है। 'दूर के ढोल सुहावन लगत' कि तरह ही हम अमेरिकी और यूरोपीय संस्कृति के पीछे भाग रहें हैं।

*कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग ढुँढे बन माहि*
*ज्यों नयनो के पूतली – त्यों माये घट जाये*
*मूरख लोग न जानिये – बाहर ढूँढन जाये*

जिस तरह मृग कस्तूरी की सुगंध को पूरे वन मे ढूँढ़ता है ठीक उसी तरह सरकार व योजनाकारों को कलाकारों और उनका यह ज्ञान भंडार कभी नही दिखाई दिया।

उच्च तकनीक व नई प्रणाली के चलते सरकार और लोगों ने अपनी परम्परागत वस्तुओं व कार्यों के प्रति बेरूख़ी अपना ली है। ऐसी परिस्थितियों में हमारे पुश्तैनी हुनरमंदों की नई पीढ़ी कठिन परिश्रम से सीखने वाले और कम लाभ वाले काम क्यों कर अपनायेगी ? इसलिए आज की भागती–दौड़ती ज़िन्दगी में जहाँ सभी एक दूसरे से आगे निकलने की होड़ में लगे हैं वहाँ हमें अपनी देसी कलाओं को सुरक्षित व संरक्षित रखने के लिए नये सिरे से प्रबन्धन करना होगा। हमारे देश में लोगों को सबसे ज़्यादा रोज़गार (45–48%) पारम्परिक लघु उद्योगों से मिलता है जो कृषि से 5–8% ज़्यादा है। लेकिन हमारे पास कामगारों को अलग से रेखांकित करने के लिए उनकी संख्या के आंकड़ों की जानकारी नहीं है। जनसंख्या वर्गीकरण को कुशलता व जाति की संख्या के हिसाब से बाँट कर अगर हम अपने सामाजिक ढाँचे पर नज़र डालें तो हुनरमंद समाज जैसे प्रजापत, विश्वकर्मा, महापात्रा, मिरासी की शक्ति का सही अन्दाज़ा हो जाएगा। मेरी फॉउन्डेशन (सारथी तथा एशियन हेरिटेज फॉउन्डेशन) ने देश की जनसंख्या में कला से जुड़े लोगों के वर्गीकरण के लिए आर्ट मेपिंग की शुरुआत कर दी है।

समस्या का समाधान बैठकर इंतज़ार करने से नहीं बल्कि स्वयं ढूँढने में है। जो मुश्किलें आज हम लोगों के सामने हैं उनका हमें खुद ही हल ढूँढना चाहिए न की अफसरों या सरकार का इंतज़ार करना चाहिए। हर नागरिक को वह सब करना चाहिए जो हम आसानी से अपनी सांस्कृतिक सम्पदा को बचाने के लिए कर सकते हैं। जैसे सप्ताह में कम से कम एक या दो बार हाथ के बुने या बनाये हुए कपड़े पहने। जिनकी हैसियत हो उनको हर बेटी के स्त्रीधन में कम से कम एक–एक साड़ी चंदेरी, कान्जीवरम, बन्धेज व कान्था आदि देने में गर्व महसूस होना चाहिए। यह सूची उतनी लम्बी हो सकती है जितनी लोगों की रूची और उत्साह। जब मैं डिज़ाइनर की हैसियत से किसी इमारत की सजावट का काम करता हूँ तो इस बात का ख़ास ख़्याल रखता हूँ कि कैसे पारम्परिक कलाकारों जैसे सोमपुरा (पश्चिमी) स्थापती (दक्षिणी) महापात्र व महाराणा (पूरबी) और रामगढ़िया (उत्तरी) ने इतनी ख़ूबसूरत

इमारतें बनाई होंगी। कभी अच्छे दस्तकारी के सामान को खरीदने में हमें पीछे नहीं रहना चाहिए और अपने घर को इन चीज़ों से सजाने के लिए नये–नये उपाय निकालने चाहिये।

कभी किसी को भी, चाहे वह कोई बड़ा अफसर ही क्यों न हो सांस्कृतिक सम्पदा को नुकसान पहुँचाने से रोकें और अपने आप को और अपने आस–पास की सुन्दरता और पारम्परिक सम्पदा को संजो कर रखें। अपनी विशेषताओं को बचाकर हम सब पर्यटन में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। 'अतिथि देवो भवः' को अपने जीवन में लाओ.....आपकी मुस्कान सब के होंठों पर होगी।

पर्यटन के बढ़ावे के लिये इन सब बातों का एक पूरा खाका बनाकर तकरीबन 20 साल पहले मैंने सरकार को नेहरू कला कुँज बनाने का सुझाव दिया था। यहाँ तक की भारतीय कला की इमारत के अलग–अलग स्तम्भ दस्तकार, लोक कलाकार, शास्त्रीय संगीतकार और बुनकरों की 4 को–ऑपरेटिव समितियाँ भी रजिस्टर्ड कराई थी। यह कला, व्यापार और पर्यटन को जोड़ कर बनाई गई एक परियोजना है जिससे कला, कलाकार और देश के पर्यटन को बहुत फायदा हो सकता है। इसमें तकरीबन 600 कलाकार परिवारों को एक साथ बसाने का प्रावधान है। साथ ही साथ इस जगह पर दस्तकारी बाज़ार, थियेटर, कलाकारों के बच्चों के लिए विशेष स्कूल, प्रदर्शन और रिहर्सल की जगह और अन्य सामान्य सुविधायें भी होंगी। यहाँ पर भारतीय व विदेशी पर्यटक कलाकृतियाँ देखने और बिना बिचौलिये के खरीदने के अलावा इन्हें बनते हुये देखने का लुत्फ भी उठा पायेंगे। नेहरू कला कुँज एवम् आंनदग्राम परियोजना सही मायने में सांस्कृतिक उद्योग का ही एक ठोस रूप है।

एक लगातार परिवर्तनशील परम्परा बहती धारा के समान होती है जो कभी मंद नहीं होती या रूकती नहीं है बल्कि गुज़रने वाले रास्ते को उपजाऊ ही बना देती है। कारवां का पहला कदम उठ चुका है और अब आवश्यकता इस बात की है कि आप सब साथ मिल कर चलें। सांस्कृतिक उद्योग उप–आयोग के गठन से इस क्षेत्र से जुड़े लोगों में नई उम्मीदें जगाना मेरा नया सपना हैं। इस उप–आयोग का उपाध्यक्ष बनने के बाद मेरी पूरी कोशिश रहेगी कि यह एक सफेद हाथी बन कर न रह जाये। मेरा आप लोगों से अनुरोध है कि मुझे इस काम को कामयाब बनाने में साथ दें। कृपया चिट्ठी लिख कर मुझे यह ज़रूर बतायें कि सांस्कृतिक उद्योग बनने से आप लोगों की क्या उम्मीदें है।

आईये आज संकल्प करें की अपने इस अभियान को हम रूकने नहीं देंगें।

जय हिन्द

राजीव सेठी

राजीव सेठी

पिछली बार मैंने आप लोगों से कहा था कि मेरी इस अवसर की यह आख़िरी चिट्ठी होगी और आगे यह चिट्ठी आप के चुने नुमाईन्दे इण्डियन कलाकार (समाचार पत्रिका) के ज़रिये खुद अपने आप लिखेंगें। लेकिन किन्ही कारणवश इस पत्रिका का गठन अभी नहीं हो पाया है। जिसकी वजह से मुझे फिर से यह चिट्ठी लिखनी पड रही है।

निमंत्रण

आप स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर झंडा रोहण के लिए आमंत्रित हैं । पिछले वर्षों की तरह इस बार किन्ही कारणो से सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन नहीं हो रहा है।

कार्यक्रम :

14 अगस्त 2006
09:30 बजे प्रातः———————— झंडा रोहण, राष्ट्रगान

कार्यक्रम स्थल –:भूले बिसरे कलाकार वर्कशॉप, कठपुतली कालोनी, शादीपुर डिपो, नई दिल्ली–110008 फोन : 25706189

शुभकामनायें

विनीत

राजीव सेठी

(राजीव सेठी)

सारथी नेहरु कला कुन्ज – फ्लेट 4, शंकर मार्किट नई दिल्ली –110001
फोन : 23411107, 23413744 फेक्स: 23414065 ई–मेल : mail@sarthi.org.